उत्पन्न हुए परमानन्द सुखामृत को नहीं पाता हुआ मूर्ख है, अज्ञानी है। इन तीन प्रकार के आत्माओं में से बहिरात्मा तो त्याज्य ही है–आदर योग्य नहीं है। इसकी अपेक्षा यद्यपि अन्तरात्मा अर्थात् सम्यग्दृष्टि वह उपादेय है, तो भी सब तरह से उपादेय (ग्रहण करनेयोग्य) जो परमात्मा उसकी अपेक्षा वह अन्तरात्मा हेय ही है, शुद्ध परमात्मा ही ध्यान करनेयोग्य है, ऐसा जानना।।१३।।

वीर संवत् २५०२, ज्येष्ठ कृष्ण ०६, गुरुवार
दिनांक-१७-०६-१९७६, गाथा-१३ से १६, प्रवचन-११

परमात्मप्रकाश। **जो देह को आत्मा समझता है,...** अर्थात् कि **वह वीतराग निर्विकल्प समाधि से उत्पन्न हुए परमानन्द सुखामृत को नहीं पाता हुआ,...** आहाहा! जो कोई पुण्य और पाप के भाव आदि या देह, उन्हें जो अपना स्वरूप जानता है, उसे जो वस्तु जो वीतराग निर्विकल्प समाधि, जो आत्मा का स्वभाव है, उससे **उत्पन्न हुए परमानन्द सुखामृत को नहीं पाता...** आहाहा! '**विचक्षणः**' की व्याख्या ही यह की है न? '**विचक्षणः**' की व्याख्या ही यह की है। पहले विचिक्षण कहा था। **वीतराग निर्विकल्प स्वसंवेदनज्ञानरूप परिणमन करता हुआ अन्तरात्मा...** आहाहा! चौथे गुणस्थान में रागरहित अभेद समाधि से उत्पन्न हुआ परमानन्द सुखामृत, उसे प्राप्त करता है। समझ में आया? सम्यग्दर्शन में अन्तर आत्मा में अन्तर स्वरूप जो है, उसमें से उसे रागरहित शान्ति से उत्पन्न सुखामृत, परमानन्द सुखामृत उसकी दशा में होता है, उसे अन्तरात्मा कहते हैं। आहाहा! और जो कोई आत्मा राग को (अपना स्वरूप) समझता है, राग, पुण्य, व्यवहार विकल्पादि... आहाहा! उसे **वीतरागी निर्विकल्प समाधि से उत्पन्न हुए परमानन्द सुखामृत को नहीं पाता हुआ मूर्ख है,...** कहते हैं। आहाहा! आत्मा का आनन्द जो सुखामृत स्वरूप, उसे प्राप्त नहीं करके और रागादि को अपना मानता है, वह मूर्ख है अर्थात् बहिरात्मा है। आहाहा!

मुमुक्षु : इसमें क्या मूर्खता हुई?

पूज्य गुरुदेवश्री : आत्मा का स्वभाव है, वह तो प्राप्त हुआ नहीं और राग को

अपना माना, यह मूर्खता है। आहाहा! राग का विकल्प है, वह भी वास्तव में देह—पर है। आहाहा! उसके ऊपर जिसकी दृष्टि है और उसे लाभदायक मानता है अथवा वह मैं हूँ, ऐसा मानता है, उसे वीतरागी शान्ति से उत्पन्न होते सुखामृत के आनन्द का अभाव है और रागादि मैं हूँ, ऐसे भाव का जिसे सद्भाव है। आहाहा! समझ में आया?

अज्ञानी है। आहाहा! सच्चिदानन्दस्वरूप भगवान वीतरागी स्वभाव और वीतरागी आनन्द से भरी पड़ी वस्तु... आहाहा! उसका जिसे आश्रय नहीं, उसे वीतरागी परमानन्द की प्राप्ति नहीं। आहाहा!

मुमुक्षु : पूरा जगत मूर्ख हुआ न?

पूज्य गुरुदेवश्री : शब्द यह लिया है न, देखो न! '**मूढः**' पहला शब्द डाला है। '**मूढः**' वह बहिरात्मा। ऐसा शब्द है न गाथा में? '**विचक्षणः**' वह अन्तरात्मा और '**ब्रह्मा**' वह परमात्मा। तीन की व्याख्या ही यह है। आहाहा! '**मूढः**' वह बहिरात्मा। उसे यहाँ मूर्ख शब्द प्रयोग किया है। आहाहा! जिसे आत्मा प्राप्त नहीं। अर्थात् कि आत्मा परम वीतराग शान्ति से उत्पन्न होता अमृत, सुखामृत भाव, उसकी जिसे प्राप्ति नहीं और राग की प्राप्ति में व्यवहार के विकल्प में मेरा, ऐसा (मानकर) पड़ा है। आहाहा! कितने ही कहते हैं कि वीतरागी समाधि चौथे में नहीं होती, आठवें में होती है। इस काल में शुद्धोपयोग नहीं होता। ऐसा कहते हैं। अरे! प्रभु! क्या कहता है तू? आहाहा! साधारण समाज मानेगी, इससे कहीं सत्य नहीं हो जायेगा। आहाहा!

इन तीन प्रकार के आत्माओं में से... यह बहिरात्मा मूढ़ कहा, अन्तरात्मा **वीतराग निर्विकल्प स्वसंवेदनज्ञानरूप परिणमन करता हुआ अन्तरात्मा...** अन्तरात्मा और ब्रह्म—**और शुद्ध-बुद्ध स्वभाव परमात्मा...** वर्तमान दशा में प्राप्त। आहाहा! **इन तीन प्रकार के आत्माओं में से बहिरात्मा तो त्याज्य ही है**- राग और देह आदि मेरे हैं अथवा इस व्यवहार राग से मुझे लाभ होगा, इसका अर्थ इस राग को ही अपना माना है। वह बहिरात्मा त्याज्य है। **आदर योग्य नहीं है।** आहाहा!

इसकी अपेक्षा यद्यपि अन्तरात्मा अर्थात् सम्यग्दृष्टि वह उपादेय है,... बहिरात्मा की अपेक्षा से बहिरात्मपना त्याज्य है, उसकी अपेक्षा से सम्यग्दृष्टि अन्तरात्मा उपादेय

है। **तो भी सब तरह से उपादेय...** आहाहा! वह तो परमात्मा। पूर्ण स्वरूप प्राप्त अथवा पूर्ण स्वरूप शक्ति का जो आत्मा, वह अन्तरात्मा भी इस अपेक्षा से हेय है। **जो परमात्मा उसकी अपेक्षा वह अन्तरात्मा हेय ही है।** गजब बात है न! समझ में आया? **शुद्ध परमात्मा ही ध्यान करनेयोग्य है,...** आहाहा! शुद्ध परमात्मस्वरूप शक्तिरूप स्वभाव, वही ध्यान करनेयोग्य है। अन्तरात्मा की दशा भी ध्यान करनेयोग्य नहीं, ऐसा कहते हैं। आहाहा! बहुत मार्ग ऐसा, बापू! परमात्मा प्राप्त है, उसका भी ध्यान करना और स्वयं शुद्ध-बुद्ध परमात्मा है, उसका ध्यान करना। आहाहा!

गाथा - १४

अथ परमसमाधिस्थितः सन् देहविभिन्नं ज्ञानमयं परमात्मानं योऽसौ जानाति सोऽन्तरात्मा भवतीति निरूपयति –

१४) देह–विभिण्णउ णाणमउ जो परमप्पु णिएइ।
परम–समाहि–परिट्ठियउ पंडिउ सो जि हवेइ।।१४।।

देहविभिन्न ज्ञानमयं यः परमात्मानं पश्यति।
परमसमाधिपरिस्थितिः पण्डितः स एव भवति।।१४।।

देहविभिण्णउ णाणमउ जो परमप्पु णिएइ अनुपचरितासद्भूतव्यवहारनयेन देहादभिन्नं निश्चयनयेन भिन्नं ज्ञानमयं केवलज्ञानेन निर्वृत्तं परमात्मानं योऽसौ जानाति परमसमाहिपरिट्ठियउ पंडिउ सो जि हवेइ वीतरागनिर्विकल्पसहजानन्दैकशुद्धात्मानुभूतिलक्षणपरमसमाधिस्थितः सन् पण्डितोऽन्तरात्मा विवेकी स एव भवति। 'कः पण्डितो विवेकी' इति वचनात्, इति अन्तरात्मा हेयरूपो, योऽसौ परमात्मा भणितः स एव साक्षादुपादेय इति भावार्थः ।।१४।।

आगे परसमाधि में स्थित, देह से भिन्न ज्ञानमयी (उपयोगमयी) आत्मा को जो जानता है, वह अन्तरात्मा है, ऐसा कहते हैं –

है देह से जो पृथक् ज्ञानमयी कहा परमातमा।
उत्कट समाधि परिस्थित अनुभवे अन्तर आतमा।।१४।।

अन्वयार्थ :– [यः] जो पुरुष [परमात्मानं] परमात्मा को [देहविभिन्नं] शरीर से जुदा [ज्ञानमयं] केवलज्ञानकर पूर्ण [पश्यति] जानता है, [स एव] वही [परमसमाधि–परिस्थितिः] परमसमाधि में तिष्ठता हुआ [पण्डितः] अन्तरात्मा अर्थात् विवेकी भवति है।

भावार्थ :– यद्यपि अनुपचरितासद्भूतव्यवहारनय से अर्थात् इस जीव के परवस्तु का संबंध अनादिकाल का मिथ्यारूप होने से व्यवहारनयकर देहमयी है, तो भी निश्चयनयकर सर्वथा देहादिक से भिन्न है, और केवलज्ञानमयी है, ऐसा निज शुद्धात्मा को वीतरागनिर्विकल्प सहजानन्द शुद्धात्मा की अनुभूतिरूप परमसमाधि में स्थित होता हुआ जानता है, वही विवेकी अन्तरात्मा कहलाता है। वह परमात्मा ही सर्वथा आराधने योग्य है, ऐसा जानना।।१४।।

गाथा - १४ पर प्रवचन

अब १४। **परमसमाधि में स्थित, देह से भिन्न ज्ञानमयी (उपयोगमयी) आत्मा को जो जानता है, वह अन्तरात्मा है,...** इसकी व्याख्या है। १४।

१४) देह-विभिण्णउ णाणमउ जो परमप्पु णिएइ।
परम-समाहि-परिट्ठियउ पंडिउ सो जि हवेइ।।१४।।

अन्तरात्मा की व्याख्या करते हैं। **जो पुरुष परमात्मा को...** अर्थात् आत्मा को **शरीर से जुदा...** परमात्म शब्द से आत्मा यहाँ है। परमात्मा वस्तु त्रिकाल आनन्दमय। वह **केवलज्ञानकर पूर्ण जानता है,... 'ज्ञानमयं'** केवलज्ञान अर्थात् अकेला ज्ञानमय भगवान आत्मा है। आहाहा! आत्मा अर्थात् अकेला केवलज्ञानमय। केवलज्ञान पर्याय की यहाँ बात नहीं है। परमात्मा को जो केवल (ज्ञान प्रगट हुआ), वह यहाँ बात नहीं है। केवलज्ञानमय। अकेली ज्ञानमय वस्तु। जिसमें पुण्य-पाप तो नहीं, परन्तु जिसमें अल्पज्ञपना नहीं। ऐसा केवलज्ञानमय भगवान आत्मा... आहाहा! है न? **'ज्ञानमयं'** का अर्थ **केवलज्ञानकर पूर्ण...** अपने स्वभाव ज्ञान से पूर्ण। आहाहा! **जानता है,...** देखो! ऐसा आत्मा अन्दर जानता है। एक ज्ञानमय पूर्ण स्वरूप हूँ, ऐसा जो सम्यग्दृष्टि जानता है।

वही परमसमाधि में तिष्ठता हुआ... भाषा देखो! यह अन्तरात्मा की व्याख्या चलती है। आहाहा! **परमसमाधि में तिष्ठता हुआ...** परम शान्ति... शान्ति... शान्ति... आहाहा! चौथे गुणस्थान में भी अनन्तानुबन्धी (कषाय गयी), उतनी समाधि और शान्ति है, ऐसा कहते हैं। आहाहा! **परमसमाधि में तिष्ठता हुआ...** शान्ति... शान्ति... है। यह अन्तरात्मा की व्याख्या चलती है। चौथे से ऐसा होता है, ऐसा कहते हैं। वे कहे, नहीं। निर्विकल्प परमसमाधि आठवें (गुणस्थान) से होती है। नीचे तो रागवाला समकित होता है। यहाँ तो अन्तरात्मा कहा। चौथे से बारहवें गुणस्थान तक अन्तरात्मा है और अन्तरात्मा की व्याख्या है। आहाहा!

वस्तु स्वयं भगवान आत्मा एक ज्ञानमय, आनन्दमय, शान्तिमय, स्वच्छतामय, प्रभुतामय ऐसा पूरा पूर्ण तत्त्व, उसे समाधि में तिष्ठता है, वह समाधि में शान्त है।

आहाहा! ऐसे स्वभाव का आश्रय लेकर और जो शान्ति प्रगट हुई है। आहाहा! उसमें रहा है, वह अन्तरात्मा है। वह पण्डित है। भले जानपना विशेष न हो। वह पण्डित है, वह **विवेकी है...** आहाहा! है? **'पण्डितः' अन्तरात्मा अर्थात् विवेकी है...** आहाहा! जिसने राग से भगवान को भिन्न करके अनुभव किया है, वह पण्डित और वह विवेकी है। आहाहा! भले विशेष शास्त्र का ज्ञान न हो परन्तु जिसने परमानन्दस्वरूप भगवान आत्मा राग से भिन्न करके परमशान्ति से अनुभव किया है, आहाहा! वह विवेकी है। जिसने राग से भिन्न करके अपने स्वरूप को अनुभव किया है। आहाहा! ऐसी बातें हैं। उसे पण्डित कहते हैं, उसे विवेकी कहते हैं, उसे अन्तरात्मा कहते हैं। आहाहा! वह शान्ति में स्थित है, ऐसा कहते हैं। समझ में आया? आहाहा!

भावार्थ :- यद्यपि अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय से अर्थात् इस जीव के परवस्तु का सम्बन्ध अनादिकाल का मिथ्यारूप होने से व्यवहारनयकर देहमयी है,... देह का, राग का सम्बन्ध अनादि का है। यह नय पहले आ गया है अपने। **अनुपचरित-सद्भूतव्यवहारनय से...** कर्म-कर्म। कर्म, देह आदि का सम्बन्ध जो है, वह नजदीक है, इसलिए अनुपचरित, परन्तु असद्भूत है। वस्तु में—आत्मा में नहीं। ऐसा जो वयवहार पर का निमित्त, वह **व्यवहारनय से अर्थात् इस जीव के परवस्तु का सम्बन्ध अनादिकाल का मिथ्यारूप होने से...** असद्भूत है न? **व्यवहारनयकर देहमयी है,...** आहाहा! देहमयी आत्मा है, रागमयी आत्मा है, ऐसा अनुपचार व्यवहारनय से कहने में आता है। वस्तु ऐसी है नहीं। आहाहा!

मुमुक्षु : मिथ्या....

पूज्य गुरुदेवश्री : मिथ्या बहिर। बहिरात्मा कहना है न! असद्भूत है न? देहादि का सम्बन्ध असद्भूत है, मिथ्या सम्बन्ध है। यहाँ तो राग को इकट्ठा डाल दिया है। नहीं तो राग का सम्बन्ध अशुद्ध निश्चय से आया था। आहाहा! परन्तु यहाँ तो सब इसमें डाल दिया है। आहाहा! वास्तव में तो अध्यात्मदृष्टि से राग का सम्बन्ध असद्भूत है। उसका भी सम्बन्ध असद्भूत व्यवहार है। आहाहा! ऐसा यहाँ इकट्ठा डाल दिया। जैसा देह का सम्बन्ध है अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से, वैसा सब फिर रागादि सम्बन्ध

अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से कहने में आया है। आहाहा! राग का सम्बन्ध भगवान आत्मा में कहाँ है? आहाहा! राग का सम्बन्ध राग में है। भगवान उससे भिन्न अन्दर है। आहाहा! अन्तरात्मा की व्याख्या बतलानी है न?

तो भी निश्चयनयकर सर्वथा देहादिक से भिन्न है,... देखा! भले वह असद्भूतनय से देहादि का सम्बन्ध कहा जाता है, परन्तु निश्चय से—यथार्थ दृष्टि से देखें, वास्तविक स्वरूप के स्वभाव की दृष्टि से देखें तो **सर्वथा देहादिक से भिन्न है,...** रागादि देह से सर्वथा भिन्न है। देखो! सर्वथा शब्द प्रयोग किया है। कथंचित् भिन्न है, ऐसा नहीं। समझ में आया? श्लोक है। 'अमोघ वर्ष, प्रश्नोत्तर रत्नमाला (गाथा)-५', नीचे कहा है। यह श्लोक है न अन्दर? '**कः पण्डितो विवेकी इति वचनात्**' इसका लिखा है। 'अमोघ वर्ष' है कोई।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, वह। 'अमोघ वर्ष, प्रश्नोत्तर रत्नमाला, गाथा-५' लिखी है। आहाहा!

कहते हैं कि असद्भूतनय से कर्म का और देह का सम्बन्ध भले कहने में आवे। परमार्थ से तो भगवान आत्मा सर्वथा देहादि से भिन्न है। उसमें रागादि से भी सर्वथा भिन्न है, (ऐसा) आ जाता है। आहाहा! व्यवहाररत्नत्रय का राग है न, उससे प्रभु सर्वथा भिन्न है। आहाहा!

और केवलज्ञानमयी है,... आहाहा! भगवान तो यह ज्ञानस्वरूप, प्रज्ञाब्रह्मस्वरूप ज्ञानस्वरूपी आत्मा है। आहाहा! उसमें राग और शरीर और दया-दान के विकल्प सब, उनसे सम्बन्ध रहित है। आहाहा! **निश्चयनयकर सर्वथा देहादिक से भिन्न है,...** असद्भूतनय से सम्बन्ध कहने में आता है। आहाहा! मिथ्यानय से देह और राग का सम्बन्ध कहने में आता है। आहाहा! भगवान आत्मा शुद्ध ज्ञानमयी अकेला ज्ञानमयी केवल ज्ञान। एक ज्ञान, ऐसा। केवल ज्ञान अर्थात् एक ज्ञान। आहाहा! उसमें मति आदि के भेद, वे तो पर्याय में हैं। वस्तु तो एक ज्ञानमयी, आनन्दमयी, वीतरागमयी, सहज प्रभुतामय वस्तु है। आहाहा! उनसे भिन्न है। आहाहा!

निश्चयनयकर सर्वथा देहादिक से भिन्न है,... कथंचित् भिन्न और कथंचित् अभिन्न, ऐसा कहो तो स्याद्वाद हो। मार्ग अनेकान्त है न? सर्वथा भिन्न है, सर्वथा पर का सम्बन्ध नहीं है, ऐसा है। आहाहा! इसलिए उसे मिथ्या कहा न? सम्बन्ध है, वह मिथ्यासम्बन्ध है। आहाहा! सोने की खान में पत्थर का सम्बन्ध है, वह झूठा है। सोना तो सोनेरूप ही है। उस समय सोना तो सोने के शक्ति-स्वभाव से रहा हुआ है। उसी प्रकार भगवान आतमा देह और कर्म के सम्बन्ध से-संयोग से है, ऐसा असद्भूतनय से, मिथ्याबुद्धि से कहो। आहाहा! परन्तु वास्तविक स्वरूप से तो ज्ञानमय, केवलज्ञानमय एकरूप ज्ञानमय, ऐसा कहना है। केवलज्ञान अर्थात् वह पर्याय नहीं। एक ज्ञानमय। आहाहा! अब ऐसी बात सुनने को मिले नहीं, उसे मोक्षमार्ग कैसे हो जाये?

मुमुक्षु : सुनने को मिले तब तो हो जाये।

पूज्य गुरुदेवश्री : करे तो हो जाये, उसमें क्या है? तब आवे ऐसा कहलाये न! (समयसार) चौथी गाथा में नहीं कहा? '**सुदपरिचिदाणुभूदा**' राग आदि की बात तो तूने अनन्त बार सुनी, परिचय किया, अनुभव में आयी। परन्तु राग से भिन्न, यह बात सुनी नहीं। समझ में आया? (समयसार की) चौथी गाथा में आता है। '**सुदपरिचिदाणुभूदा सव्वस्स वि कामभोगबंधकहा। एयत्तस्सुवलंभो**' भगवान एकत्वरूप से.. है। राग से भिन्न '**णवरि ण सुलहो विहत्तस्स**' राग से भिन्न, यह सुलभ बात नहीं है। आहाहा! समझ में आया?

और केवलज्ञानमयी है, ऐसा निज शुद्धात्मा को... देखो! अपने आत्मा की बात है। **निज शुद्धात्मा को वीतरागनिर्विकल्प सहजानन्द शुद्धात्मा की अनुभूतिरूप परमसमाधि में स्थित होता हुआ जानता है,...** देखो! अन्तरात्मा की यह व्याख्या। चौथे से बारह। भले चौथे से शुद्धि... शुद्धि... शुद्धि बढ़ती है परन्तु है तो अन्तरात्मा में वह। आहाहा! **निज शुद्धात्मा को वीतरागनिर्विकल्प...** रागरहित अभेद **सहजानन्द शुद्धात्मा की अनुभूतिरूप...** आहाहा! अरे! परमात्मप्रकाश है।

सहजानन्द शुद्धात्मा की अनुभूतिरूप परमसमाधि शान्ति में स्थित होता हुआ... शान्ति में स्थित होता हुआ जानता है,... ऐसा कहते हैं। आहाहा! इतना शान्तभाव प्रगट

हुआ है, उसमें रहा हुआ आत्मा को जानता है। आहाहा! समझ में आया? **वही विवेकी अन्तरात्मा कहलाता है।** आहाहा! जयसेनाचार्य की टीका में वीतराग समाधि आता है न? वह तो चारित्र की दशासहित की बात ली है। यह तो मूल से बात उठायी है। सम्यग्दृष्टि अन्तरात्मा अकेला ज्ञानमय हूँ, ऐसी अनुभूति में, शान्ति में रहा हुआ आत्मा को, ऐसा है—ऐसा जानता है। आहाहा! ऐसा कहकर धारणा में बात आयी कि यह आत्मा ऐसा है। तो कहते हैं कि उसमें स्थित रहकर जानता है, ऐसा नहीं। आहाहा! क्या कहा यह? आत्मा वीतराग केवलज्ञानमय है, ऐसा जिसने ज्ञान में धारणा में किया और इससे धारणा में रहकर यह ज्ञानमय आत्मा है, ऐसा जाने, ऐसा नहीं। परन्तु समाधि अर्थात् शान्ति में स्थिर होकर उसे जाने। आहाहा!

मुमुक्षु : .... उपाय बताओ।

पूज्य गुरुदेवश्री : फिर से। आहाहा! यह शब्द प्रयोग किया है, यह ... समझ में आया? **अनुभूतिरूप परमसमाधि में स्थित होता हुआ जानता है,...** और वह ख्याल में- धारणा में बात आयी कि शुद्धात्मा ऐसा है। परन्तु वह धारणा में रहकर जाना, वह जाना नहीं। आहाहा!

मुमुक्षु : जानना किसे कहा जाये?

पूज्य गुरुदेवश्री : जो अन्दर शान्ति में स्थिर होकर उसे जाने। आहाहा! यह गजब बात है न! उसका जो स्वरूप है, उस ओर ढलकर शान्ति प्रगट हुई है, ऐसा कहते हैं। समाधि अर्थात् आनन्ददशा की शान्ति प्रगट हुई है। उसमें रहकर यह आत्मा ऐसा है, यह एक ज्ञानमय। उसे जाने, वह जानना कहा जाता है। ऐसी बात! साधारण समाज को बेचारे को मिले नहीं, इसलिए मान ले कि यह हमने किया, वह धर्म है। आहाहा! अरेरे!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : अन्दर लिखा है या नहीं? लिखा है या नहीं? आहाहा!

निज शुद्धात्मा को वीतरागनिर्विकल्प सहजानन्द शुद्धात्मा की अनुभूतिरूप परमसमाधि... वर्तमान पर्याय। **निज शुद्धात्मा...** त्रिकाली। उसे **वीतरागनिर्विकल्प**

सहजानन्द शुद्धात्मा की अनुभूतिरूप परमसमाधि में स्थित होता हुआ जानता है,... आहाहा! अकषायभाव में स्थिर रहकर। आहाहा! कषायभाव से तो भिन्न कहा, परन्तु उसे जानने में, अकषायभाव में, शान्ति भाव में आकर उसे जाने, वह अन्तरात्मा विवेकी पण्डित कहा जाता है। आहाहा! भले वह बहुत पढ़ा न हो, वाँचना न आता हो, दूसरे को समझाना न आता हो। आहाहा! समझ में आया? अर्थात्? कि जो आत्मा अकेला ज्ञानमय है, उसे उसमें रहकर जाने, कहते हैं। राग में रहकर जाने अथवा यह ज्ञानमय है, ऐसी ज्ञान की धारणा में रहकर जाने, वह जानना नहीं कहलाता। आहाहा!

समाधि में स्थित होता हुआ जानता है,... गजब बात करते हैं न! क्योंकि राग में रहकर तो इसने ग्यारह अंग जाने हैं। समझ में आया? चौदह पूर्व जाने हैं। आहाहा! इसमें आत्मा ज्ञात नहीं हुआ। आत्मा तो राग के भावरहित अभेद समाधि की, शान्ति की स्थिति में रहकर... आहाहा! वह आत्मा को जानता है, उसे विवेकी पण्डित अन्तरात्मा कहते हैं। आहाहा! **वही विवेकी अन्तरात्मा कहलाता है। वह परमात्मा ही सर्वथा आराधनेयोग्य है,... वह परमात्मा ही...** त्रिकाली **सर्वथा आराधनेयोग्य है,...** आहाहा!

अब प्रगट परमात्मा की बात करते हैं। बहिरात्मा की व्याख्या ली, अन्तरात्मा की ली। अब परमात्मा की। तीन की व्याख्या है न? पहली बहिरात्मा की, यह अन्तरात्मा की, अब परमात्मा की। प्रगट परमात्मा, हों! बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा। तीनों की वस्तु है त्रिकाली, वह तो परमात्मस्वरूप ही है। परन्तु उसका आश्रय लिया है और शान्ति में आया, इसलिए उसे अन्तरात्मा कहा और शान्ति में नहीं आया और राग को अपना मानता है, उसे बहिरात्मा कहा और जिसकी दशा पूर्ण प्रगट हो गयी है, उसे परमात्मा कहते हैं। आहाहा! क्या शैली!

परमात्मा ही सर्वथा आराधनेयोग्य है,... देखा! साक्षात् का अर्थ यह किया है। **'योऽसौ परमात्मा भणितः स एव साक्षादुपादेय'** पाठ में है। इसका अर्थ सर्वथा किया। आहाहा! साक्षात् उपादेय। पूर्णानन्द का नाथ प्रभु, वही आराधनेयोग्य और वही उपादेय है। आहाहा! अर्थ के साथ। टीका में ... आता है। आहाहा!

गाथा - १५

अथ समस्तपरद्रव्यं मुक्त्वा केवलज्ञानमयकर्मरहितशुद्धात्मा येन लब्धः स परमात्मा भवतीति कथयति –

१५) अप्पा लद्धउ णाणमउ कम्म-विमुक्कें जेण।
मेल्लिवि सयलु वि दव्वु परु सो परु मुणहि मणेण।।१५।।

आत्मा लब्धो ज्ञानमयः कर्मविमुक्तेन येन।
मुक्त्वा समलमपि द्रव्यं परं तं परं मन्यस्व मनसा।।१५।।

अप्पा लद्धउ णाणमउ कम्मविमुक्कें जेण आत्मा लब्धः प्राप्तः। किंविशिष्टः। ज्ञानमयः केवलज्ञानेन निर्वृत्तः। कथंभूतेन सता। ज्ञानावरणादिद्रव्यकर्मभावकर्मरहितेन येन। किं कृत्वात्मा लब्धः। मेल्लिवि सयलु वि दव्वु परु सो परु मुणहि मणेण। मुक्त्वा परित्यज्य। किम्। परं द्रव्यं देहरागादिकम्। सकलं कतिसंख्योपेतं समस्तमपि। तमित्थंभूतमात्मानं परं परमात्मानमिति मन्यस्व जानीहि हे प्रभाकरभट्ट। केन कृत्वा। मायामिथ्यानिदानशल्यत्रयस्वरूपादिसमस्त-विभावपरिणामरहितेन मनसेति। अत्रोक्तलक्षणपरमात्मा उपादेयो ज्ञानावरणादिसमस्तविभावरूपं परद्रव्यं तु हेयमिति भावार्थः।।१५।। एवंत्रिविधात्मप्रतिपादकप्रथममहाधिकारमध्ये संक्षेपेण त्रिवाधात्मसूचनमुख्यतया सूत्रपञ्चकं गतम्। तदनन्तरं मुक्तिगतकेवलज्ञानादिव्यक्तिरूप-सिद्धजीवव्याख्यानमुख्यत्वेन दोहकसूत्रदशकं प्रारभ्यते। तद्यथा।

आगे सब परद्रव्यों को छोड़कर कर्मरहित होकर जिसने अपना स्वरूप केवलज्ञानमय पा लिया है, वही परमात्मा है, ऐसा कहते हैं –

हो सर्व कर्म-विमुक्त जो बस ज्ञानमय निज आतमा।
पा सर्व पर-त्यागी हुये तू मान वे परमात्मा।।१५।।

अन्वयार्थ :- [येन] जिसने [कर्मविमुक्तेन] ज्ञानावरणादि कर्मों का नाश करके [सकलमपि परं द्रव्यं] और सब देहादिक परद्रव्यों को [मुक्त्वा] छोड़ करके [ज्ञानमयः] केवलज्ञानमयी [आत्मा] आत्मा [लब्धः] पाया है, [तं] उसको [मनसा] शुद्ध मन से [परं] परमात्मा [मन्यस्व] जानो।

भावार्थ :- जिसने देहादिक समस्त परद्रव्य को छोड़कर ज्ञानावरणादि,

द्रव्यकर्म, रागादिक भावकर्म, शरीरादि नोकर्म इन तीनों से रहित केवलज्ञानमयी अपने आत्मा का लाभ कर लिया है, ऐसे आत्मा को हे प्रभाकरभट्ट, तू माया, मिथ्या, निदानरूप शल्य वगैरह समस्त विभाव (विकार) परिणामों से रहित निर्मल चित्त से परमात्मा जान, तथा केवलज्ञानादि गुणोंवाला परमात्मा ही ध्यान करनेयोग्य है और ज्ञानावरणादिरूप सब परवस्तु त्यागनेयोग्य है, ऐसा समझना चाहिए।।१५।

गाथा - १५ पर प्रवचन

अब १५वीं गाथा। **आगे सब परद्रव्यों को छोड़कर कर्मरहित होकर...** वर्तमान में। **जिसने अपना स्वरूप केवलज्ञानमय पा लिया है,...** पर्याय में। **वही परमात्मा है, ऐसा कहते हैं।** वह परमात्मा है। समझ में आया? बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा। बहिरात्मा, रागादि सम्बन्ध है, उसे सम्बन्ध है—ऐसा माननेवाला, मिथ्या सम्बन्ध का माननेवाला। आत्मा ज्ञानमय है, उसे नहीं अनुभव करनेवाला, वह मूर्ख बहिरात्मा। आहाहा! अन्तरात्मा वस्तु त्रिकाली शुद्ध चैतन्यमूर्ति को अभेद शान्ति की उत्पत्ति के सुखामृत में रहकर उसे—त्रिकाली को जानता है, उसे अन्तरात्मा कहते हैं। और जिसे वर्तमान दशा में कर्मरहित होकर पूर्णदशा प्राप्त हो गयी है, उसे परमात्मा कहते हैं। यह कहते हैं।

१५) अप्पा लद्धउ णाणमउ कम्म-विमुक्कें जेण।
मेल्लिवि सयलु वि दव्वु परु सो परु मुणहि मणेण।।१५।।

मन डाला जरा। मन साथ में है न! शुद्ध मन किया। **जिसने ज्ञानावरणादि कर्मों का नाश करके...** यह असद्भूतव्यवहारनय से वचन है। कर्मों का नाश। और राग का नाश, यह अशुद्धनिश्चयनय का वचन है। यह आ गया है अपने। कर्म का नाश किया, ऐसा जो कहना, वह असद्भूतव्यवहारनय का वचन है और राग का नाश किया, यह अशुद्धनिश्चयनय का वचन है। आहाहा!

ज्ञानावरणादि कर्मों का नाश करके... 'सकलमपि परं द्रव्यं' सब देहादिक

परद्रव्यों को छोड़ करके... ऐसा कहा कि ज्ञानावरणादि का नाश हुआ, परन्तु दूसरे द्रव्य आदि सब छोड़ा। आहाहा! '**ज्ञानमयः**' बस, शब्द यही प्रयोग करते हैं। **केवलज्ञानमयी आत्मा पाया है,...** आहाहा! त्रिकाली ज्ञानमय है, वह पर्याय में अकेला ज्ञानमय पाया है। आहाहा! **उसको शुद्ध मन से परमात्मा जानो।** उसे शुद्ध ज्ञान की परिणति में उसे परमात्मा जान, ऐसा कहते हैं। आहाहा! समझ में आया? वीतरागमार्ग, बापू! बहुत अलौकिक है। लोगों ने बाहर की कल्पना में मानकर वस्तु को पूरा बिगाड़ दिया। आहाहा! **निर्मल चित्त से परमात्मा जान,...** पाठ ऐसा है। निर्मल चित्त अर्थात् ज्ञान, मूल तो। आहाहा! **जिसने देहादिक समस्त परद्रव्य को छोड़कर...** और एक ओर कहना कि परद्रव्य को छोड़ना-ग्रहण करना आत्मा में है ही नहीं।

परन्तु कथन करना—समझाना किस प्रकार? परद्रव्य का ग्रहण-त्याग आत्मा में है ही नहीं। परन्तु उसे निमित्त था, इसलिए यह छोड़ा—ऐसा असद्भूतनय से कहा जाता है। आहाहा! और सब छोड़कर अन्दर रागादि भी छोड़कर आया उसमें। देहादि शब्द है न? देह, राग आदि **परद्रव्यों को छोड़कर...** केवलज्ञानमय आत्मा प्राप्त किया है। पर्याय में केवलज्ञानमय प्राप्त हुआ। जैसा ज्ञानमय एकरूप परमात्मा था, वैसा ज्ञानमय एकरूप पर्याय में प्राप्त हो गया। आहाहा! ऐसा उपदेश अब।

वे और ऐसा कहे कि अध्यात्म के कीटाणु पके हैं। देखो! यहाँ शब्द है। कीटाणु। सूक्ष्म जीव होते हैं न? इसे खा जाये न? इसी प्रकार अध्यात्म की यह बात निकली है, वह तत्त्व को खा जाती है। हमारे सब व्यवहार का नाश कर देती है। कीटाणु। जिसे जो बैठा हो... क्या करे? सुख का कामी है, परन्तु सुख को प्राप्त करने की कौन सी दशा है, इसकी खबर नहीं। 'सुख इच्छन्ति सर्व नरा।' परन्तु सुख के कारण को नहीं जानते। आता है न? ... दुःख को चाहते नहीं परन्तु दुःख के कारण को छोड़ते नहीं। समझ में आया? आहाहा! सुख को तो सर्व प्राणी चाहते हैं। 'सुख इच्छन्ति सर्व नरा, न इच्छन्ति सुख कारणम्।' परन्तु परमानन्द सुख का कारण क्या है, उसकी खबर नहीं। आहाहा! दुःख न इच्छन्ति—दुःख को चाहते नहीं परन्तु दुःख के कारण को छोड़ते नहीं। आहाहा! यह आत्मा के आनन्द की ओर ढलना चाहिए, ऐसा कहते हैं।

यह सर्राफ का व्यापार करना, ऐसा कहते हैं, वह पैसे का किया है। आहाहा! पूर्णानन्द प्रभु चीज़ जहाँ पड़ी है, उसकी ओर ढलकर समाधि—शान्ति प्रगट करके उसे जानना। आहाहा! क्या कला और क्या रीति! आहाहा!

जिसने देहादिक समस्त परद्रव्य को छोड़कर ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्म, रागादिक भावकर्म,... देखो! दोनों लिया बाद में। पुण्य-पाप आदि विकारी भाव, **शरीरादि नोकर्म इन तीनों से रहित...** आहाहा! द्रव्यकर्म, भावकर्म और नोकर्म से—तीनों से रहित **केवलज्ञानमयी अपने आत्मा का लाभ कर लिया है,...** देखो! **केवलज्ञानमयी अपने आत्मा का लाभ कर लिया है,...** वस्तु तो ज्ञानमयी थी, परन्तु पर्याय में केवलज्ञानमय का लाभ हो गया। उसे परमात्मा कहा जाता है। आहाहा! यह तीन दशाओं का वर्णन। बहिरात्मा का, अन्तरात्मा का, केवलज्ञान का। आहाहा! तीनों पर्याय का वर्णन है। बहिरात्मा भी पर्याय है, अन्तरात्मा भी पर्याय है और परमात्मा भी पर्याय है। **केवलज्ञानमयी अपने आत्मा का लाभ कर लिया है,...** आहाहा! यह लाभ सवाया। लिखते हैं न यह बनिये, नहीं?

मुमुक्षु : शुभ और लाभ।

पूज्य गुरुदेवश्री : शुभ-लाभ। दिवाली के दिन लिखते हैं। वह लाभ नहीं, बापू! आहाहा! जिसने केवलज्ञानमयी आत्मा का लाभ प्राप्त किया है, वह लाभ है। बाकी धूल में भी कहीं (लाभ नहीं है)। आहाहा!

ऐसे आत्मा को हे प्रभाकर भट्ट,... है न? '**परु मुणहि मणेण**' ऐसा है न? '**मुणहि**' तू जान, ऐसा कहा है न? उसका लिया है। **हे प्रभाकर भट्ट! तू माया, मिथ्या, निदानरूप शल्य वगैरह समस्त विभाव (विकार) परिणामों से रहित...** आहाहा! माया, मिथ्याभाव और निदान, तीन शल्य से रहित **समस्त विभाव (विकार) परिणामों से रहित निर्मल चित्त से...** पाठ में था न? '**मनसा**' निर्मल ज्ञान की परिणति से परमात्मा जान। आहाहा!

तथा केवलज्ञानादि गुणोंवाला परमात्मा ही ध्यान करनेयोग्य है... लो! **और ज्ञानावरणादिरूप सब परवस्तु त्यागनेयोग्य है,...** परमात्मा साध्य है न? इसलिए साध्य

है, वह ध्यान करनेयोग्य है, ऐसा लिया। वस्तु तो ध्यान करनेयोग्य त्रिकाली है, परन्तु पर्याय में प्रगट हुए, उन्हें भी ध्यान करनेयोग्य कहा जाता है। आहाहा! **और ज्ञानावरणादिरूप सब परवस्तु त्यागनेयोग्य है,...** आहाहा! चाहे तो व्यवहाररत्नत्रय का विकल्प हो, वह त्यागनेयोग्य है, ऐसा यहाँ तो कहा है। आहाहा!

हाँ। यह क्या है अन्दर? रागादि में क्या आया? **ज्ञानावरणादिरूप सब परवस्तु त्यागनेयोग्य है,...** उसमें तो पहले आ गया था अन्दर। रागादि भावकर्म से तीनों आया था। आहाहा! भाई! मार्ग तो ऐसा है। आहाहा! जो मोक्ष का लाभ हो, अतीन्द्रिय आनन्द का लाभ हो और वह अतीन्द्रिय आनन्द सादि-अनन्त रहे, सादि-अनन्त रहे, उसका उपाय कोई दूसरा ही होगा न! आहाहा! समझ में आया? ऐसा भगवान आत्मा रागरहित हुआ, कर्मरहित हुआ, ऐसे परमात्मा को, प्रभाकर भट्ट! उसका तू ध्यान कर। समझ में आया? आहाहा!

और ज्ञानावरणादिरूप सब परवस्तु त्यागनेयोग्य है, ऐसा समझना चाहिए। लो! १४ है न? १५-१५ नहीं? अभी यह है न! अन्दर है। देखो! आहाहा! '**हेयमिति भावार्थः**' है न? '**अत्रोक्तलक्षणपरमात्मा उपादेयो ज्ञानावरणादिसमस्तविभावरूपं**' देखो! समस्त। '**परद्रव्यं तु हेयमिति भावार्थः**' इसकी बात है। आहाहा!

गाथा - १६

लक्ष्यमलक्ष्येण धृत्वा हरिहरादिविशिष्टपुरुषा यं ध्यायन्ति तं परमात्मानं जानीहीति प्रतिपादयति –

१६) तिहुयण-वंदिउ सिद्धि-गउ हरि-हर झायहिँ जो जि।
लक्खु अलक्खेँ धरिवि थिरु मुणि परमप्पउ सो जि।।१६।।

त्रिभुवनवन्दितं सिद्धिगतं हरिहरा ध्यायन्ति यमेव।
लक्ष्यमलक्ष्येण धृत्वा स्थिरं मन्यस्व परमात्मानं तमेव।।१६।।

तिहुयणवंदिउ सिद्धिगउ हरिहर झायहिं जो जि त्रिभुवनवन्दितं सिद्धिगतं यं केवलज्ञानादिव्यक्तिरूपं परमात्मानं हरिहरहिरण्यगर्भादयो ध्यायन्ति। किं कृत्वा पूर्वम्। लक्खु अलक्खें धरिवि थिरु लक्ष्यं संकल्परूपं चित्तम्। अलक्ष्येण वीतरागनिर्विकल्पनित्यानन्दैक-स्वभावपरमात्मरूपेण धृत्वा। कथंभूतम्। स्थिरं परीषहोपसर्गैरक्षुभितं मुणि परमप्पउ सो जि तमित्थंभूतं परमात्मानं हे प्रभाकरभट्ट मन्यस्व जानीहि भावयेत्यर्थः। अत्र केवलज्ञानादिव्य-क्तिरूपमुक्तिगतपरमात्मसदृशो रागादिरहितः स्वशुद्धात्मा साक्षादुपादेय इति भावार्थ :।।१६।। संकल्पविकल्पस्वरूपं कथयते। तद्यथा-बहिर्द्रव्यविषये पुत्रकलत्रादिचेतनाचेतनरूपे ममेदमिति स्वरूपः संकल्पः, अहं सुखी दुःखीत्यादिचित्तगतो हर्ष- विषादादिपरिणामो विकल्प इति। एवं संकल्पविकल्पलक्षणं सर्वत्र ज्ञातव्यम्।

इस प्रकार जिसमें तीन तरह के आत्मा का कथन है, ऐसे प्रथम महाधिकार में त्रिविध आत्मा के कथन की मुख्यता से तीसरे स्थल में पाँच दोहा-सूत्र कहे। अब मुक्ति को प्राप्त हुए केवलज्ञानादिरूप सिद्ध परमात्मा के व्याख्यान की मुख्यता कर दस दोहा-सूत्र कहते हैं।

इसमें पाँच दोहों में जो हरिहरादिक बड़े पुरुष अपना मन स्थिरकर जिस परमात्मा का ध्यान करते हैं, उसी का तू भी ध्यान कर, यह कहते हैं –

नित हरी हर ध्याते जिसे त्रैलोक्य वंदित सिद्धिगत।
परमातमा का मन विरागी बना थिर हो ध्यान धर।।१६।।

अन्वयार्थ :- [हरिहराः] इन्द्र, नारायण और रुद्र वगैरेः बड़े बड़े पुरुष [त्रिभुवनवंदितं] तीनलोककर वंदनीक (त्रैलोक्यनाथ) [सिद्धिगतं] और केवलज्ञानादि व्यक्तिरूप सिद्धपने को प्राप्त [यं एव] जिस परमात्मा को ही [ध्यायन्ति] ध्यावते हैं, [लक्ष्यं] अपने मन को [अलक्ष्ये] वीतराग निर्विकल्प नित्यानंद स्वभाव परमात्मा में [स्थिरं धृत्वा] स्थिर करके [तमेव] उसी को हे प्रभाकरभट्ट, तू [परमात्मानं] परमात्मा मन्यस्व जानकर चिंतवन कर।

भावार्थ :- केवलज्ञानादिरूप उस परमात्मा के समान रागादि रहित अपने शुद्धात्मा को पहचान, वही साक्षात् उपादेय है, अन्य सब संकल्प-विकल्प त्यागने योग्य हैं। अब संकल्प-विकल्प का स्वरूप कहते हैं, कि जो बाह्यवस्तु पुत्र, स्त्री, कुटुंब, बांधव आदि सचेतन पदार्थ, तथा चांदी, सोना, रत्न, मणि के आभूषण आदि अचेतन पदार्थ हैं, इन सबको अपने समझे, कि ये मेरे हैं, ऐसे ममत्व परिणाम को संकल्प जानना। तथा मैं सुखी, मैं दुःखी इत्यादि हर्ष-विषादरूप परिणाम होना वह विकल्प है। इस प्रकार संकल्प-विकल्प का स्वरूप जानना चाहिए।।१६।।

गाथा - १६ पर प्रवचन

इस प्रकार जिसमें तीन तरह के आत्मा का कथन है, ऐसे प्रथम महाधिकार में त्रिविध आत्मा के कथन की मुख्यता से तीसरे स्थल में पाँच दोहा-सूत्र कहे। पाँच कहे। अब मुक्ति को प्राप्त हुए केवलज्ञानादिरूप सिद्ध परमात्मा के व्याख्यान की मुख्यता कर दस दोहा-सूत्र कहते हैं। सिद्ध परमात्मा वर्तमान प्राप्त है। आहाहा! केवलज्ञानादिरूप सिद्ध परमात्मा के व्याख्यान की मुख्यता कर दस दोहा-सूत्र कहते हैं। लो! दस दोहा कहते हैं, लो! १६-१६

१६) तिहुयण-वंदिउ सिद्धि-गउ हरि-हर झायहिं जो जि।
लक्खु अलक्खेँ धरिवि थिरु मुणि परमप्पउ सो जि।।१६।।

अन्वयार्थ :- इसमें पाँच दोहों में जो हरिहरादिक बड़े पुरुष अपना मन स्थिरकर जिस परमात्मा का ध्यान करते हैं, उसी का तू भी ध्यान कर,... हरिहरादि। इन्द्र,

नारायण,... वासुदेव। **रौद्र...** शंकरादि। **बड़े-बड़े पुरुष... 'त्रिभुवनवन्दितं'** आहाहा! यह वह है न यहाँ। नहीं? ढाल-ढाल। ... यह किया है न? क्या कहलाये पीपणीयुं? .... के सामने। नहीं? ... बाबा ने किया न? अभी शंकर का नया देवल किया। ... को नहीं था। त्रिलोकीनाथ ऐसा लिखे। देहरी बनायी है। पहले नहीं था। अब देहरी बनायी है। दूसरा एक बाबा आया लगता है। इस ओर है। ... है न .... उसमें शंकर का नाम दिया—त्रिलोकनाथ। त्रिलोकीनाथ, ऐसा करके। शंकर सुख का देनेवाला भगवान आत्मा वह त्रिलोकीनाथ है। आहाहा! आनन्द का दाता।

धीर-उदार। नहीं आया? धीर है, भगवान उदार है। अनन्त आनन्द निकालो उसमें से तो भी कम हो, ऐसा नहीं है। ओहो! अनाकुल। तीन शब्द हैं। धीर-उदार-अनाकुल। शान्तरस के तीन विशेषण हैं, ऐसा कहा न? आभूषण। आहाहा! आनन्द धीर है, शाश्वत् है। आहाहा! और अनाकुल है, उदार है। उदार। आहाहा! स्थिर का अर्थ उत्कृष्ट किया है। परन्तु... उदार का अर्थ ऐसा है। धीर है अर्थात् वस्तु प्रगट हुई है। शान्त... शान्त... शान्त... और कायम रहनेवाली है और वह उदार है। आहाहा! निर्मलानन्द का प्रवाह बहा ही करेगा। और अनाकुल है। आनन्दमय है। आहाहा! समझ में आया? यह परमात्मा की हुई पर्याय की व्याख्या की। आहाहा! स्वरूप तो ऐसा है परन्तु जिसने प्राप्त किया... आहाहा! ऐन्लार्ज किया। ऐन्लार्ज समझते हो? ऐन्लार्ज नहीं कहते? छोटी वस्तु को बड़ी बनावे। इसी प्रकार भगवान आत्मा शक्तिरूप से तो भगवान परमात्मा ही है। उसे पर्याय में बड़ा किया। आहाहा! समझे?

इन्द्र, नारायण, और रुद्र बगैरे बड़े-बड़े पुरुष... 'त्रिभुवनवन्दितं' तीन लोककर वन्दनीक... त्रिलोकनाथ आया न यह? इसलिए वह याद आया, वहाँ त्रिलोकनाथ लिखा है। त्रिलोकनाथ। अरे! भगवान! **'त्रिभुवनवन्दितं' तीन लोककर वन्दनीक...** आहाहा! **और केवलज्ञानादि व्यक्तिरूप सिद्धपने को प्राप्त...** है न? केवलज्ञानादि व्यक्ति—प्रगटरूप। प्रगट होनेरूप की बात है न? **केवलज्ञानादिक व्यक्तिरूप सिद्धपने को प्राप्त जिस परमात्मा को ही ध्यावते हैं,...** जो परमात्मा को इस प्रकार से ध्यान करते हैं। **अपने मन को वीतराग निर्विकल्प नित्यानन्द स्वभाव परमात्मा में स्थिर करके...**

आहाहा! ऐसा पूर्णानन्द परमात्म परमात्मा का ध्यान ... आहाहा! **वीतराग निर्विकल्प नित्यानन्द स्वभाव परमात्मा में स्थिर करके...** अन्तर्दर्शी। आहाहा! **'स्थिरं धृत्वा तमेव' हे प्रभाकर भट्ट! तू परमात्मा जानकर चिन्तवन कर।** ऐसे को परमात्मा जान और उसको जानकर उसका ध्यान कर, ऐसा कहते हैं। **'मन्यस्व'।**

भावार्थ :- सारांश यह है—**केवलज्ञानादिरूप उस परमात्मा के समान रागादि रहित अपने शुद्धात्मा को पहचान,...** देखा! **केवलज्ञानादिरूप उस परमात्मा के समान...** प्रगट हुए वीतराग समान **रागादि रहित अपने शुद्धात्मा को पहचान, वही साक्षात् उपादेय है,...** है न? **रागादि रहित (अपने शुद्धात्मा को पहचान), वही साक्षात् उपादेय है,...** स्व शुद्धात्मा। वह परमात्मा तो कहा, परन्तु निश्चय से तो स्व शुद्धात्मा। जिसके गर्भ में अनन्त ज्ञान, अनन्त आनन्द, शान्ति पड़ी है, ऐसा भगवान आत्मा अपना जो शुद्धात्मा, उसे शान्ति में रहकर उसका ध्यान कर। आहाहा!

ध्यान करना है। एक वह भाई नहीं? राजकोटवाला रतिलाल मनजी, रतिलाल मनजी। वहाँ आया था न पहले? वहाँ जामनगर आया था। रामविजयजी ने छंछेड़कर भेजे थे १५-२० व्यक्तियों को। उन लोगों का अकल्याण होता है। व्रत, दया, दान को तुम धर्म नहीं कहते है। क्या कहा? .... अपने चर्चा करते हैं। तब और वह लेकर आया। इस बार अभी और दूसरा लेकर आया, मुम्बई। बौद्ध। कुछ ठिकाने बिना का व्यक्ति। बौद्ध के गुरु हैं न, इन्होंने शिक्षण शिविर निकाला है। जैसे हम लगाते हैं, वैसे यह अब सब लगाने लगे। उसमें भाग लिया है। पैसे उगाहने लगे। स्वयं पैसेवाला है। २०-२५ लाख है। ऐसा कहे, ध्यान करता हूँ। परन्तु किसका ध्यान? बौद्ध ने कहा होगा कि ध्यान करना। उन लोगों में है न कुछ। पूर्वभव को याद करने के लिये बहुत प्रयोग है। पूर्वभव को। आहाहा! फिर यहाँ आये। एकान्त में आऊँ। फिर एकान्त में नहीं आया। बाहर... भाई के मकान में। रमणीकभाई के मकान में। कुछ भान नहीं होता। ध्यान, वह किसका? परन्तु अभी चीज़ क्या है? ध्यान में ध्येय करने की चीज़ क्या है, उसके ज्ञान बिना ध्यान किसका? बौद्ध में ध्यान कहाँ है? वह तो त्रिकाली को मानता नहीं। बौद्ध तो गृहीत मिथ्यादृष्टि था। कठिन बात है। उसे मोक्ष सिद्ध करते हैं।

मुमुक्षु : सब भोले लोग....

पूज्य गुरुदेवश्री : आहाहा! वह बेचारा और चीमनचकु... क्या करना?

यहाँ कहते हैं, आहाहा! **केवलज्ञानादिरूप उस परमात्मा के समान रागादि रहित अपने शुद्धात्मा को पहचान, वही साक्षात् उपादेय है,...** आहाहा! वस्तु... वस्तु... वस्तु... वस्तु... 'वस्तु वहोरजो रे... हाथे।' ... विवाह में कहते हैं। वह यह वस्तु वहोरजो। यह आत्मा के व्यापार को हाट में वहाँ... आहाहा! विवाह में गाते हैं। नहीं? वस्तु वहोरजो ऐसा कुछ है। मुझे यह याद आ गया। ... ने हाटे। ऐसा कुछ है। इसी प्रकार आत्मा के व्यापार में वस्तु यह है, उसे वहोरी लेना। त्रिकाल आनन्द का नाथ भगवान है। 'हाटडी मांडी रे मारा नाथनी।' आता है कहीं। वह हाटडी यह है। आहाहा! परमानन्द स्वभाव श्रद्धा-ज्ञान और शान्ति द्वारा तेरा ध्यान कर। आहाहा! तू परमात्मस्वरूप ही है, प्रभु! यह परमात्मदशा में हो, वह परमात्मस्वरूप न हो तो होगा कहाँ से? बाहर से हो, ऐसा है? आहाहा!

अन्य सब संकल्प-विकल्प त्यागने योग्य है। आहाहा! भगवान अस्ति सत् स्वरूप, पूर्ण सत् स्वरूप, वही आराधनेयोग्य है। आहाहा! वह तो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-शान्ति की दशा में रहकर इसे जाननेयोग्य है। आहाहा! बाकी संकल्प-विकल्प व्यवहार आदि के छोड़नेयोग्य हैं। वह सब व्यवहार है। आहाहा!

अब संकल्प-विकल्प का स्वरूप कहते हैं, कि जो बाह्य वस्तु पुत्र,... यह पुत्र मेरा, स्त्री मेरी, परिवार मेरा, बाँधव मेरे। धूल भी नहीं। लड़का छोटा हो तो, आहाहा! क्या हुआ मानो! २० वर्ष का जवान हो, उसे लड़का हो तो उसे क्या मानो... आहाहा! हाथ की अँगुली से लेकर हिलावे, ऐसे... आहाहा! दुलार करे। किसे संकल्प-विकल्प कहना, इसकी व्याख्या करेंगे। विशेष....

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)